Dr. Vandana Suman
Associate professor
Dept. of Philosophy
H. D. Jain College, Ara
M. A III Sem - CC - 14
Philosophy of Religion - II





# "Bhakti" - "भक्ति"

"भक्ति" परम तत्व की प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण साधन है। धर्म की परिणति परम भक्ति में ही होती है। भक्ति उतनी ही पुरानी है, जितना मानव हृदय। भक्ति का रूप काल-प्रवाह के साथ कुछ अधिकाधिक विकसित होता रहा है। किन्तु भक्ति का मूल रूप मनुष्य जितना ही पुराना है। भक्ति का मूल श्रद्धा है और श्रद्धा की उपस्थिति मानव सृष्टि के प्रारम्भ से ही रही है।

श्रद्धा की उम्र बहुत पुरानी है। ऋग्वेद में हम श्रद्धा की प्रशस्ति पाते हैं। बृहदारण्यक उपनिषद के अनुसार श्रद्धा मन की प्रज्ञा है। यह मानवीय व्यक्तित्व का एक नैतिक गुण है। श्रद्धा का शाब्दिक अर्थ है हृदय को किसी वस्तु में नियोजित करना। किन्तु हृदय को किसी सांसारिक पदार्थ या व्यक्तित्व से चिपकाना श्रद्धा नहीं है। श्रद्धा का मूल भाव तभी सम्भव होता है जब हृदय किसी मानव से उत्कृष्टतर सत्ता से संयुक्त होता है। सर्वप्रथम भावनाओं का हल्का सा स्पंदन मात्र होता है। किन्तु जैसे-जैसे यह स्पंदन प्रगाढ़ होता है और हृदय का रूप स्पष्टतापूर्वक निखरता जाता है, श्रद्धा का जन्म होने लगता है। इस श्रद्धा में स्नेह का तत्व विद्यमान रहता है। किन्तु इसमें एक प्रकार का संकोच रहता है, इसमें वह तीव्रता नहीं रहती जो जीवन को बदल डाले। किन्तु जब स्नेह का तत्व तीव्रतम एवं प्रगाढ़तम हो जाता है, तब वह श्रद्धा भक्ति में

| April | | | | | | 2011 |
|---|---|---|---|---|---|---|
| M | T | W | T | F | S | S |
| | | | | 1 | 2 | 3 |
| 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 11 | 12 | 13 | 14 | 15 | 16 | 17 |
| 18 | 19 | 20 | 21 | 22 | 23 | 24 |
| 25 | 26 | 27 | 28 | 29 | 30 | |

में प्रकट हो जाती हैं। इसतरह साहित्य में भक्ति का आन्तरिक सम्बन्ध प्यार माना जाता है। "भक्ति" शब्द का ही पारिभाषिक रूप है। भक्ति परम प्रेम के लिए पुंजीभूत प्रेम का ही नाम है।

भक्ति शब्द संस्कृत के दो शब्दों के योग से बना है। पहला शब्द है भज धातु - जिसका अर्थ है सेवा करना, तथा क्तिन प्रत्यय। इस तरह भक्ति का व्याकरण सम्मत अर्थ है सेवा। वैसे सेवा तो भृत्य - पिता से लेकर ईश्वर आदि मानवेतर वस्तुओं की भी हो सकती है। किन्तु सामान्य अर्थ में भक्ति का अर्थ है - ईश्वर की सेवा करना। भागवतकार और तुलसीदास भक्ति शब्द का ईश्वर की सेवा के अर्थ में ही प्रयोग करते हैं। किन्तु कोई भी व्यक्ति किसी भी देवता की सेवा तभी कर सकता है जब उसके हृदय में उस देवता के लिए स्नेह हो व जबतक किसी व्यक्ति का हृदय श्रद्धा तथा स्नेह से प्रेरित न हो, और जबतक यह स्नेह सेवा के रूप में अभिव्यक्त न हो, तब तक भक्ति के भाव का उदय नहीं हो सकता।

भक्ति की यह व्याख्या सभी प्रकार के प्रमाणों से सही सिद्ध होती है। जैसे - नारद - भक्ति सूत्र के अनुसार ईश्वर के प्रति प्रगाढ़ तथा अगरजमील स्नेह को ही भक्ति कहा

February

जाता है। शाँडिल्य भक्ति-सूत्र का कथन है कि ईश्वर के लिए तीव्र प्रेम-भाव को ही भक्ति का नाम दिया जाता है। नारद-पंचरात्र का कथन है कि समस्त सांसारिक इच्छाओं से रहित मन से ईश्वर की सेवा करना ही भक्ति है। मधुसूदन सरस्वती के अनुसार ईश्वर के गुणों के श्रवण से उल्लसित ईश्वर के प्रति समर्पित होनेवाली मानसिक वृत्ति को ही भक्ति समझा जाना चाहिए। रूप-गोस्वामी ने अपने ग्रंथ 'भक्ति-रसामृत सिंधु' में भक्ति की परिभाषा करते हुए बतलाया है कि ईश्वर के प्रेम में पूरी तरह रंग जाना ही भक्ति है।

भक्ति एक स्थायी मनोवृत्ति का नाम है जो ईश्वर की सेवा में ही परितृप्ति का अनुभव करती है। इसलिए भक्ति की प्रक्रिया यदि एक बार प्रारम्भ हो जाती है तो यह पूरी सम्भावना है कि इस प्रक्रिया का अन्त अंतिम उद्देश्य की प्राप्ति में ही होगा।

भागवत में भक्ति को परमात्मा को प्राप्त करने के लिए अत्यन्त ही महत्वपूर्ण साधन माना गया है। किन्तु भक्ति उसके अनुसार दो प्रकार की है — (1) सगुण भक्ति (2) निर्गुण भक्ति।

सगुण भक्ति में भक्त के हृदय में सांसारिक कामनाएँ रहती हैं; जबकि निर्गुण भक्ति में किसी तरह की भी कामना भक्त के हृदय में विद्यमान नहीं होती। इस तरह से निर्गुण-भक्ति दर्शन के उच्च

आदर्श की ओर व्यक्ति को ले जाती है जिसमें व्यक्ति इस विश्व की समस्त वस्तुओं से ऊपर उठ जाता है और व्यक्ति से जीवन के सुख-दुःख, हर्ष-विषाद, प्रेम-प्रयोजन सभी को स्वीकार करता है। सगुण भक्ति का परिपाक निर्गुण भक्ति में होना आवश्यक है। जब इस तरह निर्गुण भक्ति के स्तर तक भक्त पहुँच जाता है तब यह तथ्य उसके सामने प्रकट हो जाता है कि परमेश्वर अपने अंतिम रूप में निर्गुण-निराकार ही है। अपने अंतिम रूप में सगुण-निर्गुण में उसी प्रकार विलीन हो जाता है जिस तरह आकाश में छाया इन्द्रधनुष अन्त में निस्सीम गगन में ही खो जाता है।

भक्ति कई प्रकार की हो सकती है। भागवत में एक जगह भक्ति तीन प्रकार की कही गयी है, दूसरी जगह चार प्रकार की, अन्यत्र पाँच और छः प्रकार की। किन्तु भक्ति के विभिन्न प्रकारों में सामान्य रूप में नवधा-भक्ति महत्वपूर्ण मानी जाती है। इसके अनुसार "श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवनम्, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य, आत्मनिवेदनम्।" नौ प्रकार की भक्ति कही गई है। यद्यपि नौ प्रकार की भक्तियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है किन्तु भक्ति का पर्यवसान आत्म-निवेदन में ही होना चाहिए। आत्म निवेदन से तात्पर्य यह है कि

इसमें भक्त अपने आपको पूरी तरह से प्रभु के चरणों में समर्पित कर देता है, उसका अहम् पूरी तरह विलीन हो जाता है और वह प्रभुमय हो जाता है।

भक्ति का मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। वह वैयक्तिक जीवन तथा सामाजिक विकास को महत्वपूर्ण दिशा देती है। व्यक्ति अपने सामान्य जीवन में नितान्त स्वार्थपरायण होता है; किन्तु भक्ति उसकी स्वार्थपरता को खत्म कर देती है। एक भक्त न तो अपने पैसे की कोई परवाह करता है न किसी प्रकार का कोई सम्मान चाहता है और न किसी नारी के प्रति आसक्ति रखते हुए अपने आपको लिप्त करता है। उसका एकमात्र प्रेम ईश्वर से ही होता है। इसलिए वे क्रोध, भोग-लिप्साएँ जो सामान्य व्यक्ति को विनाश के गर्त में गिराती हैं भक्त को घेर नहीं पातीं। इसके साथ ही मानवीय वृत्तियों को विनष्ट करने का प्रयास भक्ति में नहीं होता। मनोविज्ञान हमें बताता है कि मानवीय सहज वृत्तियाँ किसी भी परिस्थिति में समाप्त नहीं की जा सकतीं। किन्तु इन्हें उदात्त बनाया जा सकता है। यही काम भक्ति करती है। इससे व्यक्ति की विनाशकारी प्रवृत्तियाँ सृजनशील बनकर व्यक्ति को विकसित कर देती हैं तथा सामाजिक

| April | | | | | | 2011 |
|---|---|---|---|---|---|---|
| M | T | W | T | F | S | S |
| | | | | 1 | 2 | 3 |
| 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 11 | 12 | 13 | 14 | 15 | 16 | 17 |
| 18 | 19 | 20 | 21 | 22 | 23 | 24 |
| 25 | 26 | 27 | 28 | 29 | 30 | |

कार्यों में पूरी तरह समर्पित योगदान देने के लिए भी प्रवृत्त करती है। एक भक्त अपने विकार से छिटक कर पारिवारिक को भी आर्थिक अनुचित कार्यों में सहायता नहीं देता। विभीषण इसका जीता-जागता उदाहरण है। उसने अपने परम भाई रावण को भी गलत कार्य के लिए धिक्कारा तथा सत्य के लिए बड़ा से बड़ा बलिदान देने के लिए तत्पर हो गया।

शिक्षा के प्रसार के साथ मानवीय जीवन की जटिलताएँ भी बढ़ती जा रही हैं। व्यक्ति का मन और भी अधिक संवेदनशील हो गया है। तथा आर्थिक, भावनात्मक, राजनीतिक एवं सामाजिक विभिन्न प्रकार की चिन्ताएँ उसके मन को अपना शिकार बनाती रहती हैं। इसलिए उसके लिए मनोस्नायु विकार समुत्पन्न करना सहज एवं सरल हो गया है। ऐसी स्थिति में मानसिक स्वास्थ्य की आधुनिक काल में नितान्त आवश्यकता है। मानसिक स्वास्थ्य तभी सम्भव है जब व्यक्ति स्वस्थ मनोवैज्ञानिक जीवन बिताने में सक्षम हो सके, तथा कठिनाइयों और समस्याओं को अपने मन पर गलत प्रभाव न पड़ने दे। जब तक व्यक्ति तूफानों में अविचलित होना नहीं सीखेगा तब तक मानसिक स्वास्थ्य

की सम्भावनाओं को निरस्त नहीं किया जा सकता।

इस विषय में यदि व्यक्ति को सम्पूर्ण सहायता देकर प्रत्येक अपने जीवन की समस्त विपत्तियों को हँसते-हँसते झेल सकता है, क्योंकि उसे यह विश्वास रहता है कि परम प्रभु ईश्वर जो सर्वसमर्थ हैं उसके साथ हैं और उसे प्रत्येक कठिनाई से सफलता पूर्वक निकालेगा। इसलिए उसका मन कभी भी कमजोर नहीं होता; इसका साहस कभी नहीं डगमगाता; उसका धैर्य कभी विचलित नहीं होता। वह अंगद की तरह समस्त बाधाओं के सामने अपना पैर जमाकर खड़ा हो जाता है और अविचलित रूप से अपनी जीवन-ज्योति को जागृत रखता है।

भक्त का विश्वास एक शक्तिशाली आत्म-संसूचना (आटो सजेशन) का कार्य करता है तथा उसे प्रत्येक विपत्ति के क्षणों में सहायता देता है। एमिल कोई ने इस प्रकार के आत्म-विश्वास के स्वस्थ परिणामों की ओर विश्व का ध्यान दिलाया था। उसने अनेक रोगियों का इस 'आटो सजेशन' की सहायता से ठीक किया था। उसने हमें बतलाया था कि हमारे कार्य हमारी इच्छा से नहीं हमारी कल्पना से प्रेरित होते हैं; और यदि कोई व्यक्ति इस प्रकार की कल्पना करे कि सर्व समर्थ सर्वान्तर्यामी परम दयालु ईश्वर

April 2011
M T W T F S S
1 2 3
4 5 6 7 8 9 10
11 12 13 14 15 16 17
18 19 20 21 22 23 24
25 26 27 28 29 30

आत्मा परम सहायक है तो व्यक्ति कभी भी उदास एवं निराश नहीं होगा। कई ने अपने रोगियों को अच्छा करने के लिए धर्म का प्रयोग भी किया था, इसने बतलाया था कि यदि व्यक्ति यह कल्पना करे कि वह दिन प्रति-दिन अच्छा होता जा रहा है क्योंकि ईश्वर उसकी सहायता कर रहा है तो वह भयंकर से भयंकर रोग से भी अपने आपको मुक्त कर सकता है।

यदि हम कुछ देर के लिए मान भी लें कि ईश्वर नहीं है और धर्म तथा भक्ति के मार्ग से हम परम सत्य को जानने में सफल नहीं हो सकते तो भी अपनी सामाजिक उपयोगिता के कारण भक्ति एक अत्यन्त ही प्रशंसनीय वस्तु बन जाती है। इतिहास बतलाता है कि तुलसीदास ने अपनी भक्ति के कारण हिन्दू समाज में एक नया उत्साह और उमंग पैदा करने में सफलता प्राप्त की। कबीर ने सामाजिक एकता को स्थापित करने में योगदान दिया। गाँधी ने अपने समय के सबसे शक्तिशाली राज्य से बिना किसी शस्त्र के टक्कर ली तथा स्वतन्त्रता लेकर विश्व को बतला दिया कि किस तरह एक सामाजिक त्याग को अपने विश्वास तथा शक्ति के कारण पाशविक शक्तियों से भी जीत सकता है छीन सकता है।

February 2011

| M | T | W | T | F | S | S |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 |
| 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 |
| 14 | 15 | 16 | 17 | 18 | 19 | 20 |
| 21 | 22 | 23 | 24 | 25 | 26 | 27 |
| 28 | | | | | | |

इसतरह भक्ति की उपयोगिता वैयक्तिक तथा सामाजिक दोनों प्रकार से सिद्ध हो जाती है और वह मानव जीवन की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि कही जा सकती है।